आपातकाल में सृजन फुलवारी

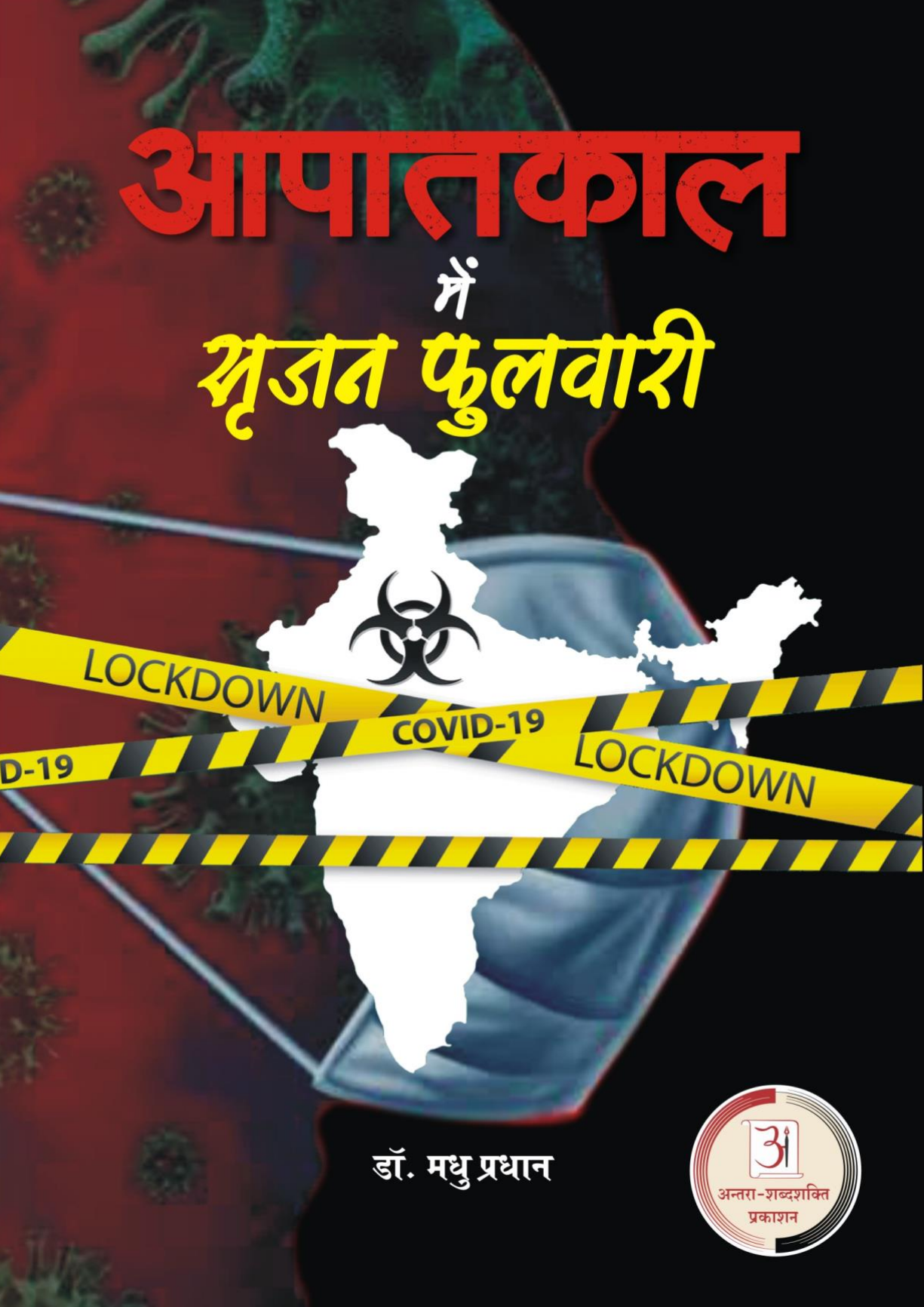

डॉ. मधु प्रधान

अन्तरा-शब्दशक्ति प्रकाशन

आपातकाल में सृजन फुलवारी

डॉ. मधु प्रधान

अन्तरा शब्दशक्ति प्रकाशन
वारासिवनी, मध्यप्रदेश

978-93-5372-208-1
संपादक- डॉ. प्रीति समकित सुराना
तकनीकी संपादक एवं आवरण चित्र - संदीप कुमार सोनी, वारासिवनी
मुख्य कार्यालय- 15 नेहरू चैक, वारासिवनी, जिला बालाघाट (म.प्र.) 481331
दूरभाष- (कार्या.) 07633-253159
मोबाईल- 9424765259
ईमेल- antrashabdshakti@gmail.com
वेबसाईट- www.antrashabdshakti
प्रथम संस्करण - 2020, डॉ. मधु प्रधान
मूल्य - 50.00 रूपये
मुद्रक- शैलू कम्प्यूटर्स, वारासिवनी

THE BOOK WRITTEN BY DR. MADHU PRADHAN

वैधानिक चेतावनीः- इस पुस्तक का सर्वाधिकार सुरक्षित है। लेखक की लिखित अनुमति के बिना इसके किसी भी अंश को फोटोकॉपी एवं रिकार्डिंग सहित इलेक्ट्रोनिक अथवा मशीनी किसी भी माध्यम में अथवा संग्रहण और पुनर्प्रयोग की प्रणाली द्वारा किसी भी रूप में पुनरूत्पादित अथवा संचारित प्रसारित नहीं किया जा सकता है। प्रस्तुत पुस्तक की समस्त रचनाएँ लेखक द्वारा अन्तरा-शब्दशक्ति प्रकाशन को प्रेषित की गई है। अतः प्रत्येक रचना की मौलिकता के किसी भी दावे हेतु लेखक जिम्मेदार है। प्रस्तुत पुस्तक के घटनाक्रम पात्र, भाषाशैली एवं स्थान सभी लेखक की कल्पना है। किसी भी प्रकार के वाद-विवाद के लिए प्रकाशक का सहमत होना अनिवार्य नहीं है।

आपातकाल में सृजन फुलवारी

सादर नमन,

आज देश जिस भयावह स्थिति से गुज़र रहा है उस स्थिति में देश का हर एक व्यक्ति या ये कहें कि विश्व का प्रत्येक मानव आर्थिक, मानसिक और शारीरिक रुप से व्यथित है। कोरोना (covid19) जैसी महामारी ने पूरे विश्व को नैराश्य के दौर में लाकर खड़ा कर दिया है।

ऐसे समय में जब हमें अनुशासित रहना है, सामाजिक दूरी बनाकर सीमित संसाधनों में जीना है, एकदम से अपनी दिनचर्या को बदलकर एकाकी जीवन यापन का अभ्यास करना है और मन में महामारी की दशहत से होने वाली नकारात्मकता और निराशा को भी नियंत्रित करना है तब सबसे सही हल होता है खुद को रचनात्मकता से जोड़ लेना। जो व्यक्ति जिस कला से जुड़ा हो उसे मनः स्थिति के अनुरुप उसी कला में सृजनात्मक हो जाना चाहिए।

बस इसी विचार ने एक दिन प्रेरित किया कि अन्तरा शब्दशक्ति प्रकाशन से जुड़े रचनाकारों को एक सृजनात्मक सरप्राइज़ दिया जाए।

अन्तरा शब्दशक्ति और जीवन के सहभागी प्रिय 'समकित सुराना' से परामर्श किया तो उन्होंने भी सहर्ष हामी भर दी। मेरे संपादन के साथ तकनीकी संपादन की सारी जिम्मेदारी हमारे तकनीकि संपादक प्रिय 'संदीप सोनी' ने ले ली और इक्यावन दिन के लॉकडाउन में एक साथ 111 किताबों का निःशुल्क ईसंस्करण तैयार किया जिसका मुद्रित संस्करण देश के परिस्थितियाँ सामान्य होते ही रचनाकारों की इच्छानुसार सशुल्क किया जा सकेगा।

अन्तरा शब्दशक्ति संस्था के सभी सदस्यों ने सृजन को हमेशा प्रेरित किया है जिसके लिए मैं सभी की हृदय से आभारी हूँ।

आपातकाल में कुछ न करने की सज़ा को कुछ करके खत्म करने में सहयोगी बने समकित, संदीप-टीना सोनी, बच्चों और पूरे परिवार की आभारी हूँ जिन्होंने हर पल मुझे मजबूत बनाए रखा।

आशा है ये सरप्राइज़ सभी रचनाकारों को उत्साहित करेगा और पाठकों को हमारा यह प्रयास पसंद आएगा। हमें प्रतिक्रियाओं की प्रतीक्षा रहेगी।

सादर आभार

संस्थापक एवं संपादक
अन्तरा शब्दशक्ति प्रकाशन
एवं पंजीकृत संस्था
डॉ प्रीति समकित सुराना

अनुक्रमणिका

1.	घर	6
2.	कौन	7
3.	बहुत दिन बाद	8
4.	कुछ सुधियाँ, कुछ सपने	9
5.	जिजीविषा	10
6.	काँटा चुभी हथेली पर	11
7.	कभी-कभी	12
8.	दुर्घटनायें	13
9.	माटी की गन्ध	14
10.	तुम्हें फिर से गढ़ना है	15
11.	कोमल कली सी कविता	16
12.	प्रकृति की प्रतिरूपा	17
13.	सपने टूटते हैं	18
14.	स्फुलिंग सूरज बन सकते हैं	19
15.	कौन हो तुम	20
16.	गुनगुनी छुअन	21

घर

कितना मोहक है
पश्चिम में झुकता हुआ सूरज
आसमान में बिखरे रंग
और घोंसले की ओर
लौटते हुये, पक्षियों का झुंड
तिनकों का घोंसला
और चिचियते बच्चों के मुंह में
चुग्गा डालती चिड़िया
एक घोंसला और,
चोंच से एक दूसरे की
गर्दन सहलाता पँछी युग्म
घोंसला एक घर
घर-एक स्वप्न
घर-एक सत्य
कितना सुन्दर है
धुंधलाता सूरज
कितना आकर्षक है
घोंसले की ओर लौटते
पंछियों का समूह

कौन

मैं बहुत कुछ
कहना चाहती थी
पर कुछ कहा नहीं
कहती भी तो सुनता कौन
मैं अकथनीय पीड़ा से
गुजरती रही
मेरा दर्द अनकहा रहा
जाहिर करती भी तो
समझता कौन
मैं पहाडों की चोटियाँ छूना चाहती थी
पर मेरे साथ चलता कौन
सूरज मुझे झुलसाता रहा
चाँदनी जलती रही
मैं बरसात में तन्हा भीगती रही
गुनगुनाती रही
कभी-कभी आँसुओं में नहाती रही
मौसम का हर रंग आया और चला गया
रंग तो मन में उगते हैं
मैं रंगों में भीगना चाहती थी
पर रंग बरसाता कौन

बहुत दिन बाद

बहुत दिन बाद
आज अपना घर, अपना सा लगा
खिड़कियां खोल कर
खुली हवा में सांस ली
कुछ घुटन बाहर फेकी, कुछ ताज़गी पी
आज कुछ गुनगुनाने को
जी कर रहा है
थरथराती आवाज में
थकन है पर उदासी नहीं
कुछ भूले-बिसरे गीत
कुछ अनगाई धुनें
मन के दरवाजे पर
दस्तक दे रही हैं
मैंने सारे ताले खोल दिए हैं
चाभियाँ डाल दी हैं, एक कोने में
बहुत थकाता है, यह चाभियों का बोझ
अहसास कराता है,
परायों के बीच होने का
पर यह सब वे नहीं समझ पायेंगे
जो साजिशों का जाल
बुनने में उलझे हैं
रच रहे हैं चक्रव्यूह
अभिमन्यु वध के लिये

कुछ सुधियाँ, कुछ सपने

कितना भी बचाओ
शातिर चोर सेंध लगा ही लेते हैं
चुरा कर ले जाते हैं यादें
और उनके प्रतीक
गायब कर देते हैं पुराने खत
जो बड़ा सेंत कर
बंडलों में रखे थे
मसल देते हैं, किताबों में रखे
सूखे गुलाबों के फूल
दबा देते हैं उस खुशबू को
जो सपनों को महका देती थी
पर मिटा नहीं पाते वह अहसास
उस प्रतिक्रिया को
जो मन में उग आती है
सब कुछ खोने के बाद
दिन-ब-दिन
तेजी से बढ़ती हुई
अमरबेल की तरह

जिजीविषा

तल्ख़ियों के बीच से
गुजरते हुए भी यह मन
उठा लेना चाहता है
कुछ सुनहरे सपने
जो आकार नहीं ले पाये
उन यादों के पल
जिनमें खुद को जिया था
बिखरती उम्मीदें
जो आज भी
साँसें ले रही हैं
न जाने किस आशा में
बड़ी हठी होती है
यह जिजीविषा
टूटने नहीं देती साँसों के तार
ढूंढ़ ही लेती है
जिन्दा रहने के, बहाने

काँटा चुभी हथेली पर

मैं जानती हूँ कि
तुम मुझे बैकवर्ड कहते हो
क्योंकि मुझे प्यार है
ओस धुले फूलों से
पहली बरसात में भीगी
मिटटी से उठी
सोंधी-सोंधी महक से
आसमान में उड़ती हुई
चिड़ियों की चहक से
कभी ये सब तुम्हें भी
अच्छे लगते थे
किन्तु अब तुम्हारी आँखों में
भर गई है आधुनिकता की चमक
और मैं अभिमन्यु की तरह
चक्रव्यूह में घिरी हो कर भी
अपनी काँटा चुभी
हथेली पर रखे
बीरबहूटी से सपनों को
दुलारने से
अपने को रोक नहीं पाती

कभी-कभी

कभी-कभी
आस - पास
बहुत कुछ होते हुए भी
मन को मथते
खाली पन के अहसास से
उगने लगता है कुछ,
कुछ सोये हुए बीज
जो अंकुरित नहीं हो पाए
अंगड़ाई लेने लगते हैं
कुछ अदेखे सपने, कुनमुना उठते हैं
कहीं गहरे दबी, आस्था
मरने नहीं देती, विश्वास को
फिर से पनपने
लगता है कल,
कल जो ला सकता है
अपने साथ कुछ नया
जो पाट दे, इन उदास गहराइयों को
शायद इसीलिए,
जीवन चलता रहता है
थक -हार कर भी
उठ खड़ा होता है,फिर से बार -बार

दुर्घटनायें

दुर्घटनायें
कह कर नहीं आतीं
जब आती हैं,हम देखते रह जाते हैं
अवाक से,कुछ पल के लिये
ठहर जाता है समय
दुर्घटनायें, हमारी दोस्त नहीं होतीं
छीन लेती हैं,बहुत कुछ
जो हमें बहुत अजीज होता है
वह भी जिसका हम लम्बे समय से
इन्तजार कर रहे होते हैं
दुर्घटनायें हमेशा,हमारी दुश्मन भी नहीं होतीं
एक कठोर शिक्षक की तरह
हमें सिखा जाती हैं, बहुत कुछ
वह सब जिसे हम सोच भी नहीं सकते थे
पहचान कराती हैं,दोस्त की, दुश्मन की
अपने और पराये की
दुर्घटनायें कभी-कभी दे जाती हैं
बहुत कुछ,एक प्यारा सा दोस्त भी
जिसकी हमें तलाश थी, बहुत दिनों से
पर पहचान नहीं पा रहे थे
नकाब पहने, हमदर्दों की भीड़ में

माटी की गन्ध

अपनी पहचान खोजने के लिये
मैं चल पड़ी थी
अनजान राहों पर
आज बहुत दूर आने के बाद,
अहसास हुआ
मैं खुद को छोड़ आई हूँ
पीछे, बहुत पीछे
मेरी साँसें कैद हैं,
शिव मंदिर के प्रांगण में
झूमते पीपल के कोटर में
जहाँ चिड़िया के, दो नन्हे बच्चे
चूँ -चूँ कर रहे हैं
मेरा सूक्ष्म शरीर
कच्ची मिट्टी के आँगन में खेल रहा है
मेरे पैर आज भी दौड़ रहे हैं
खेत की मेड़ों पर
नाचती तितलियों के पीछे
यद्यपि मेरी देह खड़ी है
ईंटों के जंगल में
पर मेरे रोम-रोम में, अन्तर में
गहराई तक, बसी है
उस माटी की गन्ध
जिसमें मेरा, बचपन खेला था

तुम्हें फिर से गढ़ना है

मेरे अन्तर में ज्वालामुखी है
और तुम्हें जीवन के
नये आयाम की तलाश
तुम चाहते हो कि
सारा लावा बाहर आ जाये
और तुम्हारी तलाश पूरी हो
पर मेरी गोद में
लहराते पौधों को देखो
एक बीज मेरी कोख में
और कुलबुला रहा है
उसे उगने से पहले, कैसे जला दूँ
मैं धरती हूँ
मेरे अन्तर में मोती हैं
तुम उन्हें बटोरना चाहते हो
मेरी गहराई जानने से पहले
अपनी थाह तो नाप लो
मैं सागर हूँ
तुम्हें आकार मिल गया है
पर मुझे लगता है
तुम आज भी अनगढ़ हो
मेरे पास आओ
तुम्हें फिर से गढ़ना है
मैं मां हूँ
मैं धरती हूँ, मैं सागर हूँ मैं, मां हूँ

कोमल कली सी कविता

घर के पिछवाड़े
गुड़ियों के घर में उगी
नन्ही कविता को
मैं बहुत दूर तक छोड़ आई थी
पर न जाने कैसे
वह चली आई मेरे पीछे-पीछे
जब सूरज बादलों की आड़ में
बीच आसमान पर होता है
अथवा जब झुरमुटों के पीछे
गुमसुम सोता है, वह गुनगुनाती है
आस - पास उगे काँटे, चुभने के डर से
अनजान, कुनमुनाती है
जब मैं जलती दोपहर में, छाँह तलाशती हूँ
वह चुपके से, आ जाती है, मेरे पास
कविता वीरान दिल में भी, कैसे रह लेती है
इसे डर नहीं लगता, तन्हाई से
कोमल कली जैसी कविता
कैसे सह लेती है, असह्य आघातों को
तीखी चुभती बातों को
फिर भी खिल जाती है, प्रतिदिन
ओस भीगे गुलाब की तरह
गुड़ियों के घर में उगी
कोमल कली सी कविता

प्रकृति की प्रतिरूपा

आकाश
शून्य होते हुए भी
कितना भरा-भरा
चन्द्र-सूर्य को अपनी बाँहों में समेटे
निहारिकाओं में
अनगिन सृष्टियाँ छिपाये
और मैं,भीड़ में भी, कितनी अकेली
एक भित्ति चित्र सी
अनेकों उद्‌वेलन छुपाये
फिर भी शून्यता की परिभाषा
काश मैं भी आकाश हो पाती
या आकाश ही
मुझमें समाहित हो जाता
प्रकृति की प्रतिरूपा मैं
प्रतीक्षा में हूँ,एक सूर्य की
जो मिटा दे यह उदास अंधेरा
और रूप-रस-गन्धमयी मैं
व्यक्त कर सकूँ, स्वयं को
बारूदी धुयें से, घुटते हुये
वातावरण में, भर दूँ
अपनेपन की, मीठी-मीठी सी, महक

सपने टूटते हैं

मैंने दीपक बन कर
जलना चाहा था
पर तुमने तो दिये का
सारा तेल ही सोख लिया
तुम शायद बाती की, बढ़ती हुई
झिलमिलाहट
नहीं सह पाये
मैंने तो तुम्हारा
रास्ता रोशन करना चाहा था
पर तुमने अपने रास्ते ही
बदल दिये
क्यों, आखिर क्यों
तुमको इतनी वितृष्णा है
निश्छल प्रेम से, अपनेपन से
मैं ही शायद
व्यवहारिक नहीं बन पाई
मैं आज भी जी रही हूँ
सपनों की दुनिया में
और सपने तो टूटते ही हैं

स्फुलिंग सूरज बन सकते हैं

सृजन और विनाश
विनाश और सृजन
चिरन्तन नियमों में आबद्ध
सृष्टि-चक्र, पर जब
अधखिले सूरजमुखी के फूलों को
और गेहूँ की दूधभरी बालों को
कोई रौंद देता है
छीन लेता है बूढ़ी मां का सहारा
कुचल देता है
गुनाहों का हिसाब माँगती आवाज़ों को
विनाश भी हतप्रभ रह जाता है
और सृजन की आँखों में
उगने लगती हैं चिनगारियाँ
दमन व अंधेरे के
संवाहक तूफान को
शायद यह मालूम नहीं
ये स्फुलिंग सूरज बन सकते हैं
और देर तक छुपे रहना
सूरज की आदत नहीं

कौन हो तुम

चित्रकार
कौन हो तुम
नित साँझ ढले
मेरे सपनों में, रंग भर जाते हो
मैं भूल जाती हूँ
दिन भर की थकन, कुंठा और उदासी
लगता है गुलाब और
बेल के उपवन में खड़ी हूँ
मेरे गन्धवाह
में थक गई हूँ
मनुष्य की खाल ओढे
पशुओं के बीच रहते-रहते
मानव तो इनके बीच
छुपा-छुपा फिरता है
इनकी आँखों में उगे
डंक बड़े पैने हैं
वर्षों तक जलन नहीं जाती
मेरे अपने
कहीं और चलो
जहाँ मानव ही मानव हों
मैं हूँ और तुम हो

गुनगुनी छुअन

तुम्हारी दृष्टि की
गुनगुनी छुअन
अन्तर तक भेद जाती है
मेरा समूचा अस्तित्व
हिम् खण्ड हो गया है
सूरज!
तुम कुछ और तप्त हो
मैं पिघल जाऊँ
बूँद-बूँद बन कर
मिल जाऊँ
मिटटी में, या
वाष्प बन कर उड़ आऊँ
तुम्हारे पास, बहुत पास !

हिन्द व हिन्दी का सम्मान
है प्रमाण देशभक्ति का
आइए करें
सृजन शब्द से शक्ति का

रचनाकार

डॉ. मधु प्रधान

Email- dr.madhu.pradhan@gmail.com
Mobile - 9236027666, 8562984895

निरन्तर गतिशील रहना जीवन्तता का प्रतीक है। कभी-कभी ठहराव जीवन में निराशा का भाव भर देता है। इस समय पूरा विश्व एक ऐसी आपदा से जूझ रहा है जिस की पूर्व में कल्पना भी नहीं की गई होगी। कोरोना के कारण लगाया गया लहक डाउन हमारी जीवन रक्षा के लिए ही आवश्यक नहीं वरन हमारे आत्म-चिंतन के लिये भी महत्त्वपूर्ण है। जीवन की आपा-धापी में हम स्वयं से सम्वाद करना ही भूल गये हैं। आगे बढ़ने की स्पर्धा में जीवन मूल्य पीछे छूटते जा रहे हैं।मनुष्य यन्त्र वत जीवन जीने को विवश हो अपने ही बनाये इंद्रजाल में उलझता, छटपटाता स्वयं के लिये ही प्रश्न चिन्ह बन गया है। इस आपातकाल ने हमको अपने से और अपनों से मिलने का एक-दूसरे को समझने का अवसर दिया है। अक्सर अनायास हुआ परिवर्तन भी व्यक्त को उद्वेलित कर देता है, वह अवसाद ग्रस्त भी हो सकता है। इन स्थितियों से उबरने का सबसे सहज व सुन्दर साधन है सृजन। सृजनात्मकता व्यक्ति को हारने नहीं देती उसमें ऊर्जा का संचार करती है। मन को उल्लसित करती है।साहित्य-संगीत जीवन को नई लय प्रदान करता है। इन विषम परिस्थितियों ने हमें नया जीवनदर्शन दिया है जो 'वसुधैवकुटुम्बकम' की अवधारणा को और दृढ़ करता है।

विश्वास है इस काल की समाप्ति के उपरान्त हम सभी नये सोच, नये उत्साह के साथ अपने-अपने कार्यो में लग जायेंगे लॉकडाउन में हमें आत्मचिंतन का जो सुख और सामाजिक सद्भाव का जो दर्शन हुआ है वह हमारे आने वाले जीवन को और मधुर और सामाजिक व खुशहाल बनाएगा, हमारी कलम फिर नई उमंगों के गीत गायेगी। विश्व आकाश पर एक नया सूरज नई रोशनी लेकर उगेगा। प्रेरक बन कर साथ चलने के लिए अंतरा शब्दशक्ति का आभार।

पं.क्र. (04/21/05/207665/19)
अन्तरा शब्दशक्ति
www.antrashabdshakti.com

15, नेहरु चौक, मेन रोड वारासिवनी, जिला- बालाघाट (म.प्र.), पिन 481331
संपर्क- 9424765259, अणुडाकः antrashabdshakti@gmail.com

978-93-5372-208-1

मूल्य 50/-

अन्तरा शब्दशक्ति के लिंक्स

Website:- www.antrashabdshakti.com
Facebook page:- https://www.facebook.com/antrashabdshakti/
Fecbook group:- https://www.facebook.com/groups/antraashabdshakti/